अनुसन्धान प्रवाह Anusandhan Pravah
(An Open Access, Peer Reviewed, Multidisciplinary, Bilingual, E-Journal)
ISSN: 3108-1541
Vol.2, Issue 1,Year 2025, pp 168-174
URL : https://journal.sskhannagirlsdc.ac.in/
सदनलाल सांवलदास खन्ना महिला महाविद्यालय
स्वर्ण जयन्ती वर्ष
2024-2025

वेदोदित स्त्र्योचित नैतिक मूल्यों की वर्तमान में उपादेयता

डॉ. नन्दिनी रघुवंशी* & डॉ. मुदित पाण्डेय**
*असि. प्रोफेसर, संस्कृत विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, प्रयागराज, उ.प्र.
**असि. प्रोफेसर, शिक्षा संकाय, काशी हिन्दू वि.वि., वाराणसी, उ.प्र.

सारांश-

वैदिक परम्परा में ज्ञान की चरम परिणति मूल्यों में मानी गई है, इसलिए भारतीय साहित्य में नैतिक, धार्मिक और सामाजिक मूल्यों को विशेष महत्त्व प्राप्त है। ये मूल्य मनुष्य को पूर्णता की ओर अग्रसर करते हैं। वैश्वीकरण के वर्तमान युग में परिवार-विघटन, विवाह-विच्छेद, स्त्री-उत्पीड़न और दहेज जैसी समस्याओं के समाधान हेतु वैदिक मूल्य अत्यन्त प्रासंगिक हैं। वैदिक दृष्टि में परिवार समाज की आधारशिला है और उसमें स्त्री की भूमिका केन्द्रीय है। ऋषियों ने स्त्री को अबला नहीं, बल्कि आत्मिक और चारित्रिक बल से सम्पन्न *सबला* माना है। दाम्पत्य और पारिवारिक सौहार्द के लिए स्त्री में समान मनोभाव, प्रसन्नता, मधुरता, सहृदयता, नम्रता और शील जैसे गुणों पर बल दिया गया है। 'सम्राज्ञी' की संकल्पना स्त्री को प्रेम और समर्पण के माध्यम से परिवार का संचालन करने वाली शक्ति के रूप में प्रस्तुत करती है। प्रस्तुत शोधपत्र प्रतिपादित करता है कि स्त्री में मूल्यों के प्रति चेतना परिवार, समाज और राष्ट्र की स्थिरता का आधार है। वैदिक आदर्शों

Article Publication:

Published online on: 30/12/2025

Corresponding Author:

डॉ. नन्दिनी रघुवंशी
असि. प्रोफेसर, संस्कृत विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, प्रयागराज, उ.प्र.

Email: nandiniraghuwanshi94@gmail.com

©S.S. Khanna Girls Degree College

Scan For Paper

से युक्त स्त्री न केवल पारिवारिक शान्ति की संवाहक है, बल्कि सामाजिक और सांस्कृतिक मूल्यों की संरक्षिका भी है।

कूटशब्द- *वैदिक वाङ्मय, नैतिक मूल्य, स्त्री, परिवार, वैश्वीकरण*

वेदानुप्राणित इस भारतीय परम्परा में ज्ञान की परिणति मूल्यों से मानी जाती है, इसलिये भारतीय साहित्य में मूल्यों को सर्वाधिक महत्त्व दिया गया है। मूल्यों से तात्पर्य है नैतिक धार्मिक और सामाजिक गुण जो मनुष्य को सत्यम् शिवम् सुन्दरम् की प्राप्ति कराते हैं। हमारा आचरण हमारे मूल्यों से प्रेरित होता है। वैदिक वाङ्मय स्वस्थ, सुदृढ़ और सार्वजनिक कल्याण की भावना से परिपूर्ण सृष्टि है. इसीलिये इसमें उल्लासप्रद, प्रेरक और विकसित सामाजिक दर्शन प्राप्त होता है। वर्तमान समय जिसे हम वैश्वीकरण का युग कहते हैं, उसमें नैतिक मूल्यों की अत्यंत आवश्यकता है ताकि वर्तमान समाज की ज्वलन्त समस्याओं जैसे परिवार-विघटन, विवाह-विच्छेद, परस्पर सम्मान की कमी, स्त्रीशील-अपहरण, दहेज प्रथा आदि का निदान किया जा सके।

समाज का प्रमुख आधार परिवार है, जिसके स्त्री व पुरुष दो प्रमुख घटक हैं। वैदिक ऋषियों ने स्त्रियों के लिये कुछ नैतिक मूल्यों को निर्देशित किया जिससे तत्कालीन समाज को उन समस्याओं का सामना नहीं करना पड़ा जिनसे आज का समाज व्यथित है।

परिवार (गृहस्थ) का आधार पत्नी है। प्रसिद्ध उक्ति है कि 'गृहिणी गृहमुच्यते' अर्थात् गृहिणी ही घर है। गृह की सुरक्षा, व्यवस्था संचालन, निरीक्षण और समुन्नय का उत्तरदायित्व पत्नी पर होता है। परिवार की श्रीवृद्धि के लिये आवश्यक है कि स्त्री में सौम्य गुणों की सत्ता प्रधान हो। सुन्दर और सुशील स्त्री पुरुष को प्रसन्न करती है।[1] सुशील स्त्री परिवार के हर्ष और आमोद को बढ़ाती है, वहीं दुःशील पत्नी परिवार के दुःख और कष्ट को बढ़ा देती है। वेद स्त्री में तीन गुण आवश्यक बताते हैं- समान मन वाला होना, सौन्दर्य और प्रसन्नचित्ता'[2]। स्त्री का समान मन वाला होना उसके दाम्पत्त्य जीवन को सुखमय बनाता है। दो भिन्न वातावरण एवं परिवेश में पले प्राणी विवाह द्वारा मिलते हैं, अतः उनके आचार-विचार और रहन-सहन में अन्तर होता है। स्त्री से पति के समान विचारों वाली बनने की अपेक्षा की गयी है, ताकि आपसी कटुता न हो। पति-पत्नी के विचारों में सामंजस्य और एकरूपता उन्हें एक लक्ष्य की ओर ले जाती है। सामञ्जस्य

पारिवारिक कलह और चिन्ता दूर रखता है और मतभेद को समाप्त करता है। वेदों में स्पष्ट उपदेश है कि यदि पति-पत्नी में किसी कारण अप्रसन्नता हो जाये तो क्रोध दूर करके अपने मनों को मिलाकर व्यवहार करने का पुनः दृढ़ निश्चय करें-

अव ज्यामिव धन्वनो मन्युं तनोमि ते हृदः।

यथा संमनसौ भूत्वा सखायाविव सचावहै।। ।[3]

सौन्दर्य स्त्री का सहज आकर्षण गुण है। सौन्दर्य से तात्पर्य आन्तरिक सुन्दरता से है। प्रसन्नता सारे दुःख दूर करती है।[4] प्रसत्र रहने से मनोवेदना, शोक, क्लेश, विषाद, भय और चिन्तायें दूर रहती हैं। सरलता, सरसता, मृदुता और प्रसत्रचित्तता दाम्पत्य जीवन को सुखमय बनाती है।

वर्तमान समय में विवाह विच्छेद की समस्या बढ़ती जा रही है जिसका प्रमुख कारण है, स्त्री व पुरुष का अहम्। विवाह दो आत्माओं के एक होने का प्रतीक है। इसीलिये विवाहित जीवन का सुख पति-पत्नी की समरसता पर निर्भर करता है। पति पत्नी का सम्बन्ध अत्यन्त सौहार्दपूर्ण, स्नेहसिक्त, सुखसौमनस्यपूर्ण, समरसतामूलक एवं समतायुक्त होता है। यदि पति-पत्नी एकरूप होकर तादात्म्य की अनुभूति करते हुये एक दूसरे का सम्मान करते हैं और परस्पर मधुर भाषण करते हैं तो दोनों का जीवन मधुर होता है। मधुर वचन जीवन में मधुरता लाते हैं और कटु कटुता। वेद शिक्षा देते हैं कि मधुरभाषिणी स्त्री पति के जीवन में मधुरता का संचार करती है।[5] यह पारिवारिक सम्बन्धों का एक प्रमुख स्तम्भ भी है। स्त्री व पुरुष के अहं के टकराव से विवाह विच्छेद हो रहा है। इसीलिये वैदिक ऋषियों ने परिवार के एक पक्ष यानि स्त्रियों से नम्र रहने की अपेक्षा की ताकि दूसरे पक्ष के कठोर होने पर भी पारिवारिक संस्था बनी रहे। इसका तात्पर्य यह नहीं है कि स्त्री को परिवार में निम्न माना जाता था। वैदिक काल में स्त्री पुरुष के समकक्ष ही थी। आज के इस युग में भी जहाँ स्त्री पुरुष के समकक्ष आने का प्रयत्न कर रही है, पति-पत्नी के सम्बन्धों की गरिमा निभाने एवं दोनों में प्रगाढ़ता लाने के लिये अहं भाव का परित्याग, मानसिकता में परिवर्तन उदार हृदयता और समझौते की भावना की आवश्यकता है।

स्त्री के लिये सामान्यतः कुछ लोगों द्वारा अबला शब्द का प्रयोग किया जाता है किन्तु वेद निर्दिष्ट करते हैं कि स्त्री अबला नहीं सबला है-

अवीरामिव मामयं शरारुरभि मन्यते।

उताहमस्मि वीरिणीन्द्रपत्नी मरुत्सखा विश्वस्मादिन्द्र उत्तरः।।[6]

चारित्रिक न्यूनता और आत्माबल का अभाव निर्बलता होता है, इसीलिये स्त्रियों में चारित्रिक और आत्मिक बल के उत्कृष्टता की कामना की गयी हैं, क्योंकि यही उसे निर्भय बनाता है। उसकी सच्चरित्रता और पातिव्रत्य उसे सबला बनाता है। पतिव्रता स्त्री पति का प्रेम प्राप्त करती है। ऐसी स्त्री परिवार समाज व राष्ट्र में सम्मानित होती है।

वेदों का यह कथन प्रसिद्ध है जिसमें वधू (स्त्री) को सम्राज्ञी होने का निर्देश दिया गया है कि वह ससुराल में श्वसुर, सास, ननद और देवरों पर सम्राज्ञी हो कर रहे।[7] यहाँ सम्राज्ञी से तात्पर्य है कि स्त्री प्रेम से पारिवारिक सदस्यों को अपने वश में कर, उन पर शासन करें, न कि अपने आदेशों को कठोरतापूर्वक उन पर आरोपित करें। जैसे एक वृक्ष का आधार जड़ होती है, वह जड़ बीज का मूर्त रूप। बीज जड़ रूप को अपना सर्वस्व समर्पित करके प्राप्त करता है, उसी प्रकार स्त्री से अपेक्षा की गयी है कि पारिवारिक हित-चिन्तन में स्वयं को समर्पित कर परिवार पर शासन करें, उसका आधार बनें। वैदिक ऋषि स्त्री से अपेक्षा करते हैं कि वे परिवार में सौहार्द्र और सौमनस्य बनायें रखे।[8]

पारिवारिक शान्ति मनुष्य के विकास में अत्यंत आवश्यक है। ऐसे गृह जहाँ गृहकलह होता है उस घर के सदस्यों का विकास भी समुचित नहीं होता है, पारिवारिक सदस्यों में मानसिक तनाव रहता है। यह गृहिणी का कर्तव्य है कि परिवार में शान्ति और प्रेम बनायें रखें। स्त्रियों का कर्तव्य है कि वह परिवार में मनुष्य ही नहीं, पशुओं के प्रति भी प्रेमपूर्वक व्यवहार करे।[9] गृहिणी का परिवार में सर्वाधिक महत्वपूर्ण स्थान होता है। गृह व्यवस्था से लेकर सन्तान के लालन-पालन के साथ ही विविध धार्मिक सामाजिक क्रियाओं में भी वह भाग लेती हैं।

सहृदयता और पुरुषार्थ दो अन्य गुण हैं जो स्त्री में आवश्यक है। सहृदय स्त्री में सम्वेदना होती है वही सबके सुख दुःख में सहभागिनी हो सकती है। सुख दुःख में सहभागिता ही व्यक्ति को आत्मीय बनाती है। पुरुषार्थ या परिश्रम से ही स्त्री समाज और परिवार में आदर प्राप्त करती है। जब स्त्री विभिन्न आयोजनों पर परिश्रम करती है और सहयोग देती है तो अन्य स्त्रियां भी उसके साथ उसी अनुरूप व्यवहार करती हैं, इसी से समाज में सहभागिता बनती है-

एषा ते कुलपा राजन्तामु ते परि दद्मसि।

ज्योक्पितृष्वासाता आ शीर्ष्णः समोप्यत्।।[10]

स्त्री को 'कुलपा' कहा गया है' अर्थात् वह कुल की रक्षक है।कुल की प्रतिष्ठा में वृद्धि करना, प्राचीन परम्पराओं का निर्वहन करना, कुल को दूषित करने वाले दुर्गुणों का परित्याग और सन्तान को उत्तम शिक्षा देना उसका परम कर्त्तव्य

है। प्राचीन समय में कन्या के विवाह के अवसर पर प्रेमपूर्वक दिया गया उपहार वृद्धि करते हुये वर्तमान समय में दहेज की विकराल समस्या के रूप में सामने आया है। जिसका परिणाम बहन-बेटी-वधू के रूप में स्त्री को भुगतना पड़ता है। इसी व्यवस्था के प्रतिकार के लिये वैदिक ऋषियों ने स्पष्ट कहा कि वधू के वहतु (दहेज) को ज्ञानपूर्वक मित्र की दृष्टि से देखें।[11] इसमें निर्देश है कि उस धन के लिये लालच की भावना नहीं होनी चाहिये। अपितु मित्र के समान उसका सम्मान होना चाहिए।

वर्तमान समय में अंगप्रदर्शन स्त्री स्वतंत्रता का आधार बनाया जा रहा है, जो कि अनजाने में ही अनेक अपराधों को भी जन्म दे रहा है। वेदों में स्त्री से लज्जाशील होने की अपेक्षा की गयी है।। लज्जाशील होने से तात्पर्य यह नहीं है कि उसे स्वतंत्रता न दी जाये। यहाँ स्त्री से उसके अंगों के अभद्र प्रदर्शन न करने की सलाह दी गयी है। इसी मंत्र में उसे नीचे की ओर देखकर चलने की सलाह दी गयी है. जिसका अर्थ है कि उसके व्यवहार में सुशीलता और विनम्रता प्रकट होनी चाहिये। सुशील व्यवहार ही स्त्री के शोभाजनक होता है। सुशीलता और शारीरिक एवं आन्तरिक शुद्धिः या परिष्कर उसके लिये निर्दिष्ट किये गये हैं-

अधः पश्यस्व मोपरि संतरां पादकौ हर।

मा ते कशप्लकौ दशन्स्त्री हि ब्रह्मा बभूविथ।।[12]

सुशीलता का गुण स्त्री में मनोरमता और लावण्य का आधान करता है। बाह्य शुद्धि उसे सुन्दर बनाती है और आन्तरिक शुद्धि उसे पवित्र करती है।वर्तमान की एक अन्य बृहद् समस्या स्त्री शील की रक्षा है। देश में आये दिन इस तरह की घटनायें सामने आ रही हैं। दिसम्बर 2012 के निर्भया काण्ड ने तो पूरे देश को झकझोर दिया और सरकार को आनन-फानन में कानून बनाने के लिये बाध्य कर दिया। वैदिक ऋषियों ने इन्हीं समस्याओं को रोकने के लिये स्त्री शील की रक्षा को राष्ट्र का उत्तरदायित्त्व बताया। स्पष्ट निर्देश दिया कि वही राष्ट्र सुरक्षित रह सकता है जहाँ स्त्री शील की रक्षा होती है।[13] स्त्री अपहरण राष्ट्र के लिये कलंकित होता है।[14]स्त्री अपहरण करने वाले को भी परलोक में भी कष्ट पाने वाले बताया।

वैदिक ऋषियों ने स्त्री के व्यक्तित्व के सम्पूर्ण विकास पर बल दिया है। सभा में बोलने वाली स्त्री को उत्कृष्ट कहा गया है।[15] स्त्री का कर्त्तव्य बताया गया है कि उसे भाषाणादि कार्यों में उत्कृष्ट होना चाहिये। घर ही नहीं बाह्य क्षेत्र में भी उसकी कुशलता की कामना की गयी है। स्त्री को परोपकार के मार्ग पर अग्रसर करने के लिये उससे अपेक्षा की गयी है

कि वह दीन-दुःखियों के दुःख को दूर करने वाली, प्यासे को पानी और याचक को उसकी अभिलषित वस्तु प्रदान करने वाली होनी चाहिये।[16] ऐसा आचरण करके स्त्री समाज में आदरयोग्य होती है। स्त्री को जागरूक रहने की शिक्षा दी गयी है। जागरूक और अपने कर्तव्यों के प्रति सचेष्ट स्त्री ही सुखी जीवन व्यतीत करती है और दीर्घायु प्राप्त करती है।[17]

इससे स्पष्ट है कि वैदिक ऋषियों ने स्त्रियों से क्षमा, प्रेम, शील, दयालुता, मधुरता, निर्भयता तथा नम्रता की अपेक्षा की थी ताकि समाज की आधार स्तम्भ परिवार व्यवस्था सुचारु रहे। स्त्री के व्यक्तित्व का भी पूर्ण विकास हो। वह व्यक्तिनिष्ठ न होकर सबको साथ लेकर चलने वाली भावना से अग्रसर हो। परिवार की शान्ति और परिवारीजनों का विकास उसी पर निर्भर है। वह परिवार की शिक्षादात्री है। अतः उसमें यदि मूल्यों के प्रति चेतना होगी तो उसका प्रभाव समाज यह भी पड़ेगा। इसीलिये वेदों में उपदेश है-

यन्ती राड् यन्त्र्यासे यमनी ध्रुवासि धरित्री।

इषे त्वोर्जेत्वा रय्यै पोषाय त्वा।।[18]

स्त्री को पृथ्वी के समान क्षमायुक्त आकाश के समान निश्चल और यन्त्रकला के समान जितेन्द्रिय तथा कुल का पोषण करने वाली होना चाहिये।

---

[1] ऋग्वेद 10.30.5
[2] ऋग्वेद 4.58.8, यजुर्वेद 17.6
[3] अथर्ववेद 6.42.1
[4] गीता 2.65
[5] ऋग्वेद 10.32.3
[6] ऋग्वेद 10.86.9, अथर्ववेद 20.26.9
[7] ऋग्वेद 10.85.46
[8] अथर्ववेद 3.30.2
[9] ऋग्वेद 10.85.44
[10] अथर्ववेद 1.14.3
[11] अथर्ववेद14.2.12
[12] ऋग्वेद 8.33.19
[13] अथर्ववेद 5.17.3, ऋग्वेद 10.109.3
[14] अथर्ववेद 5.17.6, ऋग्वेद 10.109.4
[15] ऋग्वेद 10.159.2
[16] ऋग्वेद 5.61.7
[17]अथर्ववेद 14.2.75
[18] यजुर्वेद 14.22

सन्दर्भ-ग्रन्थ

1. सरस्वती, स्वामी दयानन्द (2015). ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका. सोनीपत: रामलाल कपूर ट्रस्ट.
2. सरस्वती, स्वामी दयानन्द (2016). सत्यार्थ प्रकाश. दिल्ली: आर्ष साहित्य प्रचार ट्रस्ट्र.
3. यजुर्वेद संहिता.(2005). नई दिल्ली: विश्व मानव उत्थान परिषद्.
4. अथर्ववेद संहिता. (2005). नई दिल्ली: विश्व मानव उत्थान परिषद्.
5. श्रीमद्भगवद् गीता. (1999). गोरखपुर: गीता प्रेस.
6. सरस्वती, स्वामी समर्पणानन्द(भाष्य.)(2013). श्रीमद्भगवद् गीता. दिल्ली: दिल्ली संस्कृत अकादमी.